सेवा और सहिष्णुता के उपासक

संत तुकाराम

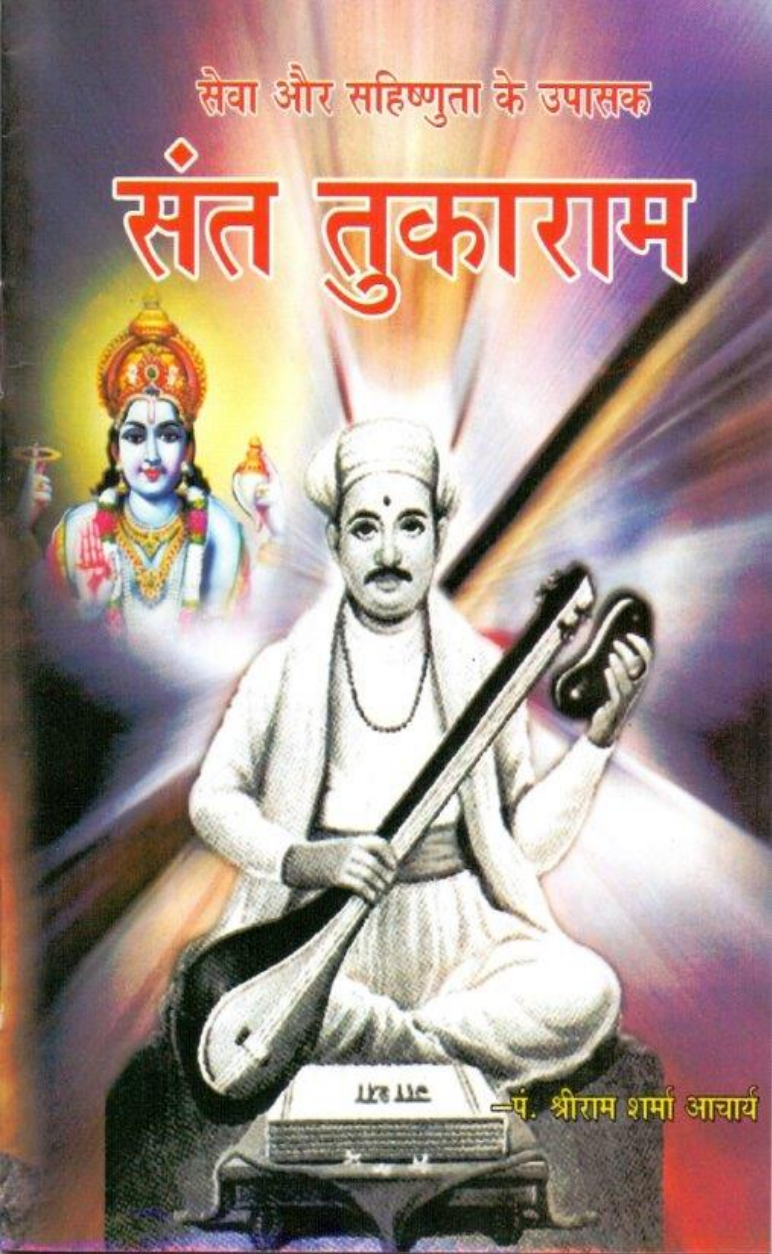

—पं. श्रीराम शर्मा आचार्य

सेवा और सहिष्णुता के उपासक—
संत तुकाराम

संसार में सभी मनुष्यों का लक्ष्य, धन, संतान और यश बताया गया है। इन्हीं को विद्वानों ने वित्तैषणा, पुत्रैषणा और लोकैषणा के नाम से पुकारा है। इन तीनों से विरक्त व्यक्ति ढूँढ़ने से भी कहीं नहीं मिल सकता। संभव है किसी मनुष्य को धन की लालसा कम हो, पर उसे भी परिवार और नामवरी की प्रबल आकांक्षा हो सकती है। इसी प्रकार अन्य व्यक्ति ऐसे भी मिल सकते हैं कि जिनको धन के मुकाबले में संतान अथवा यश की अधिक चिंता न हो। पर इन तीनों इच्छाओं से मुक्त हो जाने वाला व्यक्ति किसी देश अथवा काल में बहुत ही कम मिल सकता है।

इसका आशय यह नहीं कि इस प्रकार की आकांक्षा रखने वाला मनुष्य निश्चय ही दूषित समझा जाए। संसार में रहते हुए इन वस्तुओं की आवश्यकता मनुष्य को पड़ा ही करती है और यदि इस आवश्यकता को न्यायानुकूल मार्ग से पूरा किया जाय तो उसमें बुराई अथवा निंदा की कोई बात नहीं है। पर देखने में यह आता है कि बहुसंख्यक लोग इनके लिए गलत उपायों का अवलंबन करते हैं, इनकी लालसा में पड़कर अन्य उच्च श्रेणी के लक्ष्यों को त्याग देते हैं, इसीलिए इन तीनों एषणाओं की ज्ञानी व्यक्तियों ने निंदा की है।

दूसरी बात यह भी है कि चाहे ये तीनों कामनायें सामान्य दृष्टि से बुरी या हानिकारक न हों, पर जब मनुष्य का ध्यान अधिकांश में इनकी पूर्ति में लग जाता है, तो वह परोपकार, सेवा आदि के अधिक श्रेष्ठ कार्यों की तरफ से प्रायः उदासीन हो जाता है। ऐसी दशा में यदि कोई व्यक्ति सांसारिक एषणाओं की तरफ से चित्त-वृत्तियों को बिल्कुल हटा ले और उनकी अपूर्ति में भी आनंद का अनुभव करे, तो उसको अवश्य ही सच्चा संत कहा जायेगा। तुकाराम इसी श्रेणी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

के मनुष्य थे। गृहस्थ जीवन के आरंभ में ही जब वे आकस्मिक विपत्तियों के फलस्वरूप सब सांसारिक वस्तुओं से वंचित हो गये, उन्होंने भगवान् को धन्यवाद देते हुए कहा—

"भगवान् ! अच्छा ही हुआ जो मेरा दिवाला निकल गया। अकाल पड़ा यह भी अच्छा ही हुआ, क्योंकि कष्ट पड़ने से ही तेरा ध्यान आया और सांसारिक लालसाओं से पीछा छूटा। स्त्री और पुत्र भोजन के अभाव से मर गये और मैं भी हर तरह से दुर्दशा भोग रहा हूँ, यह तो ठीक ही है। संसार में अपमानित हुआ, यह भी अच्छा ही हुआ। गाय—बैल, द्रव्य सब चले गये, यह भी अच्छा ही है। लोक-लाज भी जाती रही, यह भी ठीक है, क्योंकि इन्हीं बातों से अंत में तुम्हारी शरण में आया।"

"सच तो यह है कि भगवान् अपने सेवक को सांसारिक सफलता मिलने ही नहीं देते, वे उसे सब जंजालों से मुक्त रखते हैं। अगर वे उसको वैभवशाली बना दें तो उसमें अभिमान उत्पन्न हो जाय। अगर वे उसे गुणवती स्त्री दें तो मन में उसी की इच्छा लगी रहे। इसलिए वे उसके पीछे कर्कशा स्त्री लगा देते हैं। तुकाराम कहते हैं कि इन सबको मैंने प्रत्यक्ष देख लिया, अब मैं संसारी लोगों से क्या कहूँ ?"

बाल्यावस्था में गृहस्थ संचालन—

संत तुकाराम का जन्म पूना के निकट देहू गाँव में संवत् १६६५ वि० में एक कुनवी परिवार में हुआ था। इस जाति वालों को महाराष्ट्र में शूद्र माना जाता है और वे खेती-किसानी का धंधा करते हैं। पर तुकाराम के घर में पुराने समय से लेन-देन का धंधा होता चला आया था और उनके पिता की आर्थिक स्थिति अच्छी थी। इसलिए उनकी बाल्यावस्था सुखपूर्वक व्यतीत हुई। जब वे तेरह वर्ष के हुए तो उनके माता-पिता घर का भार उनको देकर स्वयं तीर्थों में भगवत् भजन करने के उद्देश्य से चले गये। तुकाराम उसी आयु में दुकान का हिसाब-किताब करने में होशियार हो गये थे और पिता ने उनका विवाह भी कर दिया था, पर वे स्वभाव से अत्यंत सरल, सेवाभावी और सत्यवादी थे। इसका परिणाम यह हुआ कि दुनियादार

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

लोगों ने उनका कर्ज चुकाना तो बंद कर दिया और जैसे बने उन्हें ठगने की कोशिश करने लगे।

लोगों की ऐसी मनोवृत्ति देखकर उनका चित्त सांसारिक व्यवहारों से विरक्त होने लगा। पर घर में कई प्राणियों स्त्री, भाई, बहिन आदि का निर्वाह करने का भार उनके ऊपर था, इसलिए फुटकर सामान की दुकान खोल ली। पर वे कभी झूठ नहीं बोलते थे, कभी किसी को ठगते नहीं थे, सबके प्रति उदारता का व्यवहार करते थे, इससे स्वार्थी लोग फिर उनके साथ धोखा और ठगी का व्यवहार करने लगे और दुकान में घाटा लग गया। जिन लोगों को उन्होंने उधार दिया था, वे तो देने का नाम नहीं लेते थे, पर जिनको लेना था वे फौरन नालिश करके घर पर 'जब्ती' का हुक्म ले आये। ससुराल वालों ने एकाध बार सहायता भी की, पर सरलता के कारण लोग उनको किसी न किसी प्रकार ठगते ही रहे और उनकी आर्थिक दशा गिरती ही रही।

कई बार उन्होंने माल ले जाकर बेचने का कार्य शुरू किया। एक बार मिर्च लेकर किसी दूर के स्थान में बेचने को गये। वहाँ जो रुपया मिला उसको लोगों ने नकली सोने के कड़े देकर ठग लिया। दूसरी बार स्त्री (द्वितीय पत्नी) ने दो सौ रुपया कर्ज दिलाकर व्यापार करने को भेजा। उसमें पचास रुपया लाभ भी हुआ। पर वहीं पर एक ब्राह्मण ने आकर अपना दुःख रोया और इतनी अधिक विनती की कि सब रुपया उसी को देकर चले आये। इस पर स्त्री ने उनको बहुत खरी-खोटी सुनाई और दंड दिया।

जब उस प्रदेश में भयंकर अकाल पड़ा तो एक बूँद पानी मिलना कठिन हो गया, वृक्ष सूख गये, पशु बिना चारे के मर गये। तुकाराम के घर में अन्न का दाना भी न था। किसी के दरवाजे पर जाता तो वह खड़ा भी नहीं होने देता, क्योंकि दिवाला निकल जाने से उनकी साख पहिले ही जाती रही थी। घर वाले भूखों मरने लगे। तुकाराम हद से ज्यादा परिश्रम करते, पर तब भी पेट नहीं भरता। सब पशु और पहली स्त्री तथा बच्चा इसी में मर गये। इस प्रकार कष्ट सहन करते-करते तुकाराम का मन संसार में विरक्त होने लगा और वह अपना अधिकांश समय परमात्मा के ध्यान और भजन में

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

लगाने लगे। उसकी दूसरी पत्नी जीजाबाई का स्वभाव बड़ा झगड़ालू और लड़ाका था। इससे घर में रह सकना और भी कठिन हो जाता था। गाँव के लुच्चा-लफंगा व्यक्ति भी उनको अक्सर छेड़ते रहते थे। वे उनको देखकर कहने लगते—"और भगवान् का भजन करो, हरि के नाम ने तुझे निहाल कर दिया।"

वैराग्य और एकांतवास—

ऐसी परिस्थिति में भी तुकाराम घर छोड़कर साधू-संत नहीं बने, पर उन्होंने चित्त शुद्धि के उद्देश्य से कुछ समय एकांतवास करने का निश्चय किया। इसलिए वह निकटवर्ती 'भामनाथ' पर्वत पर चले गये और वहाँ पंद्रह दिन तक भगवान् का ध्यान ही करते रहे। जब यह बात गाँव में फैली तो तुकाराम की पत्नी जीजाबाई बड़ी दुःखी हुईं। स्वभाव से वह लड़ाका और झगड़ा करने वाली अवश्य थी, पर साथ ही पतिव्रता भी थीं। उसने तुकाराम के छोटे भाई कान्हाजी को उन्हें ढूँढ़ लाने को भेजा। इधर-उधर फिरते-फिरते भामनाथ पर उसकी तुकाराम के साथ भेंट हुई। वह उन्हें समझा-बुझा कर घर ले आया।

अब तुकाराम मे संसार के झगड़ों को सदा के लिए मिटाने का निश्चय किया। उन्होंने पिता के समय के सब दस्तावेज (ऋण-पत्र) निकाले, जो कर्ज लेने वालों ने लिखकर दिये थे। उन सबको वह गाँव के पास वाली इंद्रायणी नदी में डुबाने चले। यह देखकर छोटे भाई ने कहा—"आप तो 'साधू' हो गये।' परंतु मुझे तो बाल-बच्चों का पालन करना होगा। अगर आप इन सब रुपयों को इस तरह डुबा देंगे तो मेरा काम कैसे चलेगा ?" तुकाराम ने उत्तर दिया—"ठीक है, तुम इनमें से आधे दस्तावेज निकाल लो और अलग रहकर अपनी गृहस्थी चलाओ। मेरा सब भार तो विट्ठल भगवान् पर है। अब मेरा जीवन-क्रम सदा ऐसा ही रहेगा और मेरा निर्वाह भगवान् पांडुरंग ही करेंगे। पर मैं यह नहीं चाहता कि मेरे कारण तुमको किसी तरह की हानि पहुँचे। इसलिए तुम अपना भाग लेकर अलग हो जाओ और मेरी चिंता न करो।" यह कहकर उसने आधे ऋण-पत्र कान्हाजी को दे दिए और अपने हिस्से के उसी समय नदी में प्रवाहित कर दिए।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इस घटना का वर्णन करते हुए कुछ समय पश्चात् संत तुकाराम के एक शिष्य ने लिखा था—

"जब तक अनुभव न हो तब तक पुस्तकों में लिखा ज्ञान प्रायः निरर्थक रहता है। इसी प्रकार हमारा जो धन दूसरों के कब्जे में है, वह भी व्यर्थ होता है। इससे मन में हमेशा खराबी पैदा होती रहती है। अमुक मनुष्य के पास से इतना लेना है, पर देगा या नहीं देगा ? न जाने क्या होगा ? इस प्रकार की तरह-तरह की चिंताएँ और दुराशा मन में लगी रहती हैं। इसलिए तुकाराम ने अपने सारे कागज-पत्र इंद्रायणी नदी में डाल दिये। इसके पीछे उन्होंने कभी द्रव्य का स्पर्श नहीं किया। दरिद्रता के सब प्रकार के दुःख उन्होंने सहन कर लिए, माँगकर भी निर्वाह कर लिया, पर द्रव्य को कभी न छूने का निश्चय करके वे धन के फंदे से सदा के लिए छुटकारा पा गये।"

जीवन को सुखी बनाने के लिए ऐसे कार्यों से बचना आवश्यक है, जिनमें अन्य लोगों से विवाद, झगड़ा और संघर्ष होने की विशेष रूप से संभावना रहती है। लेन-देन अथवा ब्याज पर रुपया उधार देने का पेशा प्रशंसनीय नहीं है। इसमें प्रायः अभावग्रस्त व्यक्तियों के शोषण की भावना निहित रहती है और इसलिए इस पेशे को करने वाले व्यक्तियों में स्वार्थपरता की भावना बढ़ जाती है, साथ ही अन्य व्यक्तियों के प्रति उनमें सहानुभूति की भावना भी कम हो जाती है। तुकाराम की प्रकृति जन्म से ही इस कार्य के अनुकूल नहीं थी, इसलिए उन्हें इस पुश्तैनी पेशे में आरंभ से ही असफलता होने लगी। और बाद में तो उसके कारण वे नई-नई कठिनाइयों में फँसते चले गये। इसलिए दस्तावेजों को नष्ट करके अपने मन को इस उलझन से मुक्त कर लेना उचित ही था। अध्यात्म मार्ग के पथिक को जीवन निर्वाह का पेशा भी ऐसा चुनना चाहिए, जो अपनी आंतरिक प्रकृति के अनुकूल हो और जिसमें अन्य व्यक्तियों के अनहित की कोई संभावना न हो।

इस प्रकार अपना जीवन-मार्ग सुनिश्चित करके तुकाराम अपने को आध्यात्मिक जीवन के उपयुक्त बनाने के लिए साधना करने लगे। प्रातःकाल नित्यकर्म से निवृत्त होकर, विट्ठल भगवान् की पूजा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

करके वे नदी के पार किसी पर्वत पर चले जाते और वहाँ 'ज्ञानेश्वरी' अथवा 'एकनाथी भागवत' का पारायण करते। इसके बाद जो समय बचता उसमें नाम-जप करते। संध्या के समय गाँव में वापस आकर मंदिर में कीर्तन सुनते और फिर स्वयं आधी रात तक कीर्तन करते। पिछली रात को थोड़ी देर सो लेते थे। फिर ब्रह्ममुहूर्त में उठकर नित्य कर्मों में लग जाते थे।

इस प्रकार विरक्त अवस्था में रहकर उन्होंने भूख, प्यास, निद्रा, आलस्य को जीत लिया। गीता के अनुसार 'युक्ताहार विहार' होने से सब इंद्रियाँ वश में आ गईं। समय-समय पर वे तीर्थयात्रा को भी जाते थे, पर वे तीर्थ आस-पास के ही होते थे। अपने पूर्वजों के नियमानुसार आषाढ़ और कार्तिक की पूर्णिमा को पंढरपुर तो जाते ही थे। ज्ञानेश्वर की जन्मभूमि 'आलंदी' तथा एकनाथ का निवास स्थान 'पैठण' उनके गाँव से पास ही थे। फिर एक बार तेईस-चौबीस वर्ष की अवस्था में उन्होंने समस्त भारत के तीर्थों की यात्रा करके भारतीय समाज की अवस्था और तत्कालीन समस्याओं की जानकारी प्राप्त की। पर तीर्थों की दशा उस समय भी बहुत त्रुटिपूर्ण हो गई थी और सब जगह धर्म-जीवियों ने उनको पेट भरने का साधन बना लिया था। इसलिए सब तीर्थों को देख लेने पर उन्होंने यही कहा—

वाराणसी गया पाहिली द्वारका।
परि नये तुका पंढरी च्या।।

अर्थात्—"काशीजी की यात्रा की और द्वारका भी देखी, पर हमको तो पंढरपुर ही सर्वोत्तम लगता है।"

सेवा-मार्ग का पथिक—

सांसारिक उलझनों और व्यवसाय संबंधी कुटिलताओं के कारण तुकाराम का जीवन दुःखमय हो गया था और इसकी प्रतिक्रिया स्वरूप उनके मन में वैराग्य की भावना सुदृढ़ हो गई। यों तो संसार में अनगिनती लोगों का जीवन अभावपूर्ण और दुःखी होता है, असह्य कष्ट आ पड़ने पर उनको वैराग्य भी हो जाता है, पर यह वैराग्य क्षणिक होता है। ऐसे वैराग्य को ज्ञानियों ने 'श्मशान-वैराग्य' कहा है। ऐसा वैराग्य श्मशान-भूमि से बाहर आते ही समाप्त हो जाता

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

है, क्योंकि वह ऊपरी होता है, चार आँसू गिरते ही ठंडा पड़ जाता है। तुकाराम दुनिया के तिकड़मों से केवल व्यथित ही नहीं हुए, वरन् उन्होंने इन झंझटों की वास्तविकता को समझकर उनकी जड़ ही काट दी। यद्यपि उन्होंने घर-गृहस्थी को नहीं छोड़ा क्योंकि कर्तव्य पालन से वे विमुख होना नहीं चाहते थे, पर सांसारिक कार्यों को गौण और अध्यात्म-साधन को प्रमुख मानकर 'जीवन-मुक्ति' के आदर्श को अपना लिया। सेवा-धर्म के मार्ग पर चलने वाले को इस प्रकार हानि-लाभ, प्रिय-अप्रिय, सुख-दुःख में समत्व-भावना उत्पन्न करना अनिवार्य है।

स्वार्थ-भाव के स्थान पर परमार्थ-पथ के पथिक बनने पर उन्होंने सेवाधर्म को ही ईश्वर-भक्ति का माध्यम बनाया। उनका सबसे पहला सेवा-कार्य था—पूर्वजों द्वारा स्थापित विट्ठल मंदिर का जीर्णोद्धार। यह मंदिर विश्वंभर बुवा ने बनवाया था, जो तुकाराम से आठ पीढ़ी पहले हुए थे। अब यह बहुत कुछ टूट-फूट गया था। तुकाराम के पास धन तो था नहीं, उन्होंने श्रमदान द्वारा इस कार्य को पूरा किया और इसी को भगवान् की 'कायिक-सेवा' मान लिया। अपने इस उदाहरण से उन्होंने प्रकट किया कि केवल कीर्तन और नाम जप ही भगवान् की भक्ति के चिह्न नहीं है, वरन् किसी प्रकार की प्रत्यक्ष सेवा भी उसका एक आवश्यक अंग है।

इसलिए तुकाराम ने स्वयं पहाड़ से पत्थर लाकर इकट्ठे किये, मिट्टी भिगोकर गारा तैयार किया और दीवारें बनाईं। यह सब काम उन्होंने अपना पसीना बहाकर किया। इस तरह मंदिर का जीर्णोद्धार करने से उन स्वयं का भी जीर्णोद्धार हो गया। हृदय के अंतःस्थल में दबे हुए भाव उभरकर ऊपर आ गये, भक्ति जाग्रत् हुई और फिर इसी भक्ति ने उनको भगवान् के विराट् रूप के दर्शन करा दिये। जिस मनोवृत्ति में भगवान् रहते हैं, जिस भाव से भगवान् मिलते हैं, उसी भाव को उन्होंने मंदिर के जीर्णोद्धार द्वारा अपने सामने मूर्तिमान् किया। चित्त में ऐसे भाव का उदय होने पर, गारे और मिट्टी का काम करते हुए भी भगवान् की सेवा कैसे हो सकती है ? इसे सच्चे भक्त ही जान सकते हैं। चंदन, धूप, दीप, नैवेद्य, आरती, प्रभाती, दंडवत्, भजन, पूजन, कीर्तन—ये सब उपासना के बहिरंग

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

हैं। इनके साथ अगर चित्त में सच्चा भाव न हो तो ये 'बहिरंग' बाहर के बाहर ही रह जाते हैं। चित्त में सच्चा भक्ति भाव होने पर ही ये बहिरंग आध्यात्मिक-प्रदेश में पहुँचाने का साधन बनते हैं।

आत्मानुभव और शास्त्रीय सिद्धांत—

आरंभिक जीवन में तुकाराम कुछ पढ़े-लिखे न थे और गृहस्थ हो जाने पर भी केवल दुकानदारी का बहीखाता कर सकने योग्य विद्या प्राप्त कर सके थे। पर उसके पश्चात् जब उनका झुकाव अध्यात्म-मार्ग की तरफ हुआ और उन्होंने एकांत में एकाग्र होकर दो-चार धार्मिक ग्रंथों का पारायण तथा मनन किया तो अनेक प्रकार के धार्मिक और शास्त्रीय तत्त्व स्वयमेव उन पर प्रकट हो गये। उनके अभंगों (मराठी कविताओं) में वेद, शास्त्र, पुराण, गीता, भागवत्—सबके उपदेशों का आभास मिलता है। एक 'अभंग' में वे कहते हैं—

विश्वीं विश्वंभर बोले वेदांती चा सार।
जगीं जगदीश शास्त्र बदती सावकाश।।
व्यापिलें हें नारायणें ऐसी गर्जती पुराणें।
जनीं जनार्दन संत बोलती वचन।
सूर्याचीया परी, तुका लोकीं क्रीड़ा करी।।

अर्थात्—"वेदांत का सार यही है कि समस्त विश्व में एक ही विश्वंभर व्याप्त है। यह जगत् जगदीशमय है, यह बात शास्त्रों से धीरे-धीरे विदित होती है। पुराण गर्जकर कह रहे हैं कि समस्त दृश्य जगत् नारायण का ही रूप है। जनता में जनार्दन समाया है, यह संतों की वाणी है। इस प्रकार, जैसे भी विचार किया जाय, एक मात्र हरि ही समस्त लोक में क्रीड़ा कर रहे हैं।"

संकीर्ण विचारों के व्यक्ति विभिन्न शास्त्रों के सिद्धांतों को लेकर जिस प्रकार दूसरों पर आक्षेप किया करते हैं, या अपने ही सांप्रदायिक विचारों को सत्य और दूसरों को निराधार बतलाया करते हैं, वह धर्म-संबंधी ज्ञान का नहीं वरन् अज्ञान का द्योतक है। धर्म में सच्ची श्रद्धा, भक्ति रखने वाला व्यक्ति तो सबमें एक ही तत्त्व को व्याप्त देखेगा। वेद, शास्त्र, पुराण, संतों की वाणी—यह समस्त

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

साहित्य केवल इसी उद्देश्य से रचा गया है कि मनुष्य परमात्मा का बोध करके संशयरहित हो और जीवन-मरण के चक्र से छुटकारा पावे। जल तो एक ही है। जल, आब, नीर, वाटर आदि उसके विभिन्न नाम हैं। कोई नदी के किनारे रहकर उसी जल से काम चला लेता है, कोई सरोवर के जल का व्यवहार करता है और कोई कुएँ के जल को सर्वोत्तम समझकर उसी को काम में लाता है। नदी, कुआँ, सरोवर—इन सबका उद्देश्य एक ही है कि प्यासे जीव उनके द्वारा अपनी पिपासा को शांत करें। पर यदि कोई इस उद्देश्य की पूर्ति के बजाय इनके नामों (उपाधि) पर वाद-विवाद करने लगता है तो यह प्यास लगना नहीं माना जायेगा—इसे सच्ची जिज्ञासा नहीं कह सकेंगे। चोखामेला महार, रैदास चमार, सदन कसाई आदि बहुत नीच जाति के कहे जाते थे, पर वे सच्ची प्यास लगने से सत्संग द्वारा ज्ञानरूपी जल को पीकर कृतार्थ हो गये।

तुकाराम को भी जन्म से शूद्र माना जाता था, इसलिए ब्राह्मण-धर्म की परंपरा के अनुसार उनको वेदाध्ययन का अधिकार नहीं था। उन्होंने कई अभंगों में स्पष्ट कहा है कि—"मुझे 'अक्षरों' के बाँचने का अधिकार नहीं है।" पर उन्होंने इस संबंध में कभी ब्राह्मणों के साथ झगड़ा नहीं किया। उनका मन इतना क्षुद्र नहीं था कि मूल-तत्त्व को त्यागकर ऐसी निरर्थक बातों पर अपनी शक्ति लगायें। वे जानते थे कि ब्राह्मणों को वेदाधिकार होने पर भी सब ब्राह्मण वेदाध्ययन नहीं करते और जो करते हैं, वे सब संसार-सागर से पार नहीं हो जाते और अगर वे सब पार हो जाते हों तो भी इसमें हमारा क्या नुकसान है ? इससे दूसरे लोगों के लिए ऊँचे उठने का रास्ता तो बंद नहीं हो जाता। भगवान् ने तो गीता ९-३ में स्पष्ट कह दिया है—

स्त्रियो वैश्या स्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परांगतिम्।

इस शास्त्र-वचन के अनुसार वैश्य, शूद्र, स्त्री—सबके लिए मोक्ष का द्वार खुला है, जिनको वेदों का अधिकारी बतलाया जाता है, उनमें से थोड़े उनका अध्ययन करने वाले थे और उनके अनुसार आचरण करने वाले तो नाम मात्र को ही थे। इसके सिवाय वेदार्थ अत्यंत गहन है, शास्त्र अपार है और मनुष्य का जीवन बहुत छोटा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

है। इसलिए धर्म और अध्यात्म का जो रहस्य पुराणों और भाषाग्रंथों में सुलभ रूप से मिलता है, उसी से लाभ क्यों न उठाया जाय ? जिसके हृदय में सच्ची लगन है, वह विवाद में नहीं पड़ता। उसको तो जो साधन समीप में और सुलभ रूप में मिल जायेगा, उसी का अवलंबन लेकर अपना उद्देश्य सिद्ध कर लेगा। इसलिए तुकाराम ने पुराणों और संत-वाणी को ही अपने अध्ययन के लिए पसंद किया। उन्होंने पहले ही कह दिया है—

पुंढिलांचे सोयी माभया मना चाली।
मातेचीं आणिली नाहीं बुद्धि।।

अर्थात्—"पूर्व समय के संतों के मार्ग पर चलना, यही मेरी प्रवृत्ति है। मैंने अपनी बुद्धि से कोई नया मत ग्रहण नहीं किया है।" आगे चलकर अपनी विनयशीलता का परिचय देते हुए लिखा है—"मेरी वाणी तो मूर्ख की बकवाद है, बालक की तोतली बातों के समान है। आप संतजनों का उचित सेवन करके, आपका आश्रय पाकर ही मेरे मुख से प्रसाद गुणयुक्त वाणी निकली है।" तुकाराम के इन उद्‌गारों को पढ़कर हमको गोस्वामी तुलसीदास जी की निम्न उक्ति याद आ जाती है—

भाषा भनिति भोरि मति मोरी।
हँसिवे जोग हँसे नहीं खोरी।।
छमहहिं सज्जन मोर ढिठाई।
सुनहहिं बाल वचन मन लाई।।

इसमें संदेह नहीं कि तुकाराम ज्ञान के सच्चे आराधक थे, जिन्होंने बिना विशेष शिक्षा प्राप्त किये शास्त्र के मूलतत्त्व को ग्रहण कर लिया और उसे ऐसे लोकोपयोगी रूप में प्रकट किया, जिससे अभी तक लाखों व्यक्ति अध्यात्म मार्ग पर चलने की प्रेरणा प्राप्त कर रहे हैं।

गुरु-महिमा—

भारतवर्ष के साधकों का विश्वास है कि सद्‌गुरु की कृपा बिना किसी को अध्यात्म मार्ग में सफलता नहीं मिल सकती। अनेक लोग यही कहा करते हैं कि हमने ग्रंथों का अध्ययन कर लिया, अपनी

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

बुद्धि से उनका रहस्य भी समझ लिया, अब गुरु की क्या आवश्यकता है ? जो लोग इस प्रकार का विचार रखते हैं, वे अंत में अहंकार के जाल में ही फँसे दिखाई पड़ते हैं। विद्या प्राप्त कर लेने पर भी बिना उपयुक्त मार्ग-दर्शक के उसे व्यवहार में लाना और पूरा लाभ उठा सकना बहुत कठिन होता है। श्रीमत् शंकराचार्य जैसे महान् मनीषी भी यही कह गये हैं—

षडंगादिवेदो मुखे शास्त्रविद्या।
कवित्वादि गद्यं सुपद्यं करोति।।
गुरोंरघ्रिपद्मे मनश्चेन्न लग्नं।
ततः किं ततः किं ततः किं ततः किं।।

अर्थात्—"यदि तुमने छह अंग सहित वेद और शास्त्र कंठस्थ कर लिए और बढ़िया काव्य तथा गद्य रचना करने लगे, पर गुरु के चरणों में तुम्हारा मन संलग्न नहीं हुआ तो सब निरर्थक है—निरर्थक है।"

तुकाराम अध्यात्म-मार्ग के साधारण पथिक नहीं थे। इसलिए उन्होंने जो कोई मिल गया, उसे यों ही सहज में गुरु नहीं बना लिया। अनेकों को कसौटी पर कसकर देखा और फिर दूर से ही प्रणाम करके विदा कर दिया। जहाँ-तहाँ ब्रह्मज्ञान की कोरी बातें सुनने में आईं, पर उसके प्रत्यक्ष लक्षण कहीं देखने को नहीं मिले। उन्होंने बार-बार दीनतापूर्वक सद्गुरु के लिए पुकार की, पर उनको सर्वत्र "दिखावटी पहाड़ और नींव रहित दीवारें" ही दिखलाई पड़े। तुकाराम चारों तरफ पाखंड और दंभ देखकर चिढ़ गये और उन्होंने ऐसे 'दंभी संतों की अपने 'अभंगों' में खूब खबर ली—

काम क्रोध लोभ चित्तीं, वारि-वारि दाविती विरक्ती।
तुका म्हणे शब्द-ज्ञानें, जग नाड़ियलें तेणें।। १।।
रिद्धि-सिद्धि चे साधक, वाचा सिद्ध होती एक।
त्यांचा आम्हासो कंटाला, पाहों नावड़ती डोलां।। २।।
दावुनि वराग्यची कला, भोगो विषयांचा सोहरणा।
ज्ञान सांगतो जनांसो, अनुभव नाहीं आपणोसी।। ३।।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अर्थात्—"चित्त में तो काम, क्रोध, लोभ भरा हुआ है, पर ऊपर से विरक्त का-सा भाव प्रकट कर रहे हैं। ऐसे गुरु कोरे शब्द ज्ञान से दुनिया को धोखा देते हैं।।१।। कोई ऋद्धि-सिद्धि के फेर में पड़ा है, कोई वाक्-सिद्ध बनता है। इन सबसे मेरा मन उपराम हो गया है, उनको मैं देखना भी नहीं चाहता।।२।। वैराग्य की 'चमक' दिखलाते हैं, पर स्वयं विषयों में लिप्त हैं। लोगों को ज्ञान सिखलाते हैं, पर स्वयं कुछ अनुभव नहीं रखते।।३।।

ऐसे दंभी, अधकचरे और गुरु बनकर पेट भरने वाले 'संत' जगह-जगह बहुत-से मिल गये, पर तुकाराम की शुद्ध और सूक्ष्म बुद्धि को सच्चे और झूठे की परख करते कितनी देर लगती थी ? उन्होंने उसी समय कह दिया—"भजन और स्तुति रचने वाले संत नहीं हैं। संतों के परिवार वाले भी संत नहीं हैं। अपना घर भरकर दूसरों को वैराग्य का उपदेश करने वाले संत नहीं हैं। केवल कथा बाँचने वाले, कीर्तन करने वाले, माला-मुद्रा धारण करने वाले, भस्म लपेटने वाले, जंगलों में रहने वाले अथवा जप-तप करने वाले भी संत नहीं हैं। ये सब बाहरी लक्षण हैं, इनसे किसी की साधुता (आध्यात्मिकता) प्रकट नहीं होती।" अंत में तुकाराम ने किस प्रकार इस समस्या को हल किया, उस संबंध में अपना अनुभव वे इस प्रकार प्रकट करते हैं—

"मैंने ज्ञानियों के यहाँ भगवान् को ढूँढ़ने की चेष्टा की, परंतु देखा कि उनके पीछे तो अहंकार पड़ा हुआ है। शास्त्र-परायण पंडितों को देखा तो वे एक-दूसरे को नीचा दिखलाने में ही लगे थे। आत्म-निष्ठा देखने का प्रयत्न किया, तो उनकी चेष्टाएँ उलटी ही दिखाई पड़ी। योगियों को देखा तो उनमें भी शांति नहीं है, क्रोध के वशीभूत होकर एक-दूसरे को घुड़की देते रहते हैं। इसलिए हे भगवान् ! अब मुझे किसी के सम्मुख विवश न कराओ। मैंने इन सब उपायों से थककर अब दृढ़तापूर्वक आपके चरण ही पकड़ लिए हैं।"

जब तुकाराम को ढूँढ़ने पर भी अपनी पसंद के माफिक सच्चा गुरू न मिला और संभवतः ब्राह्मणों ने शूद्र मानकर उनको दीक्षा का पात्र भी न समझा तो उन्होंने विट्ठल भगवान् से ही गुरू बतलाने की

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

प्रार्थना की। भगवान् ने उनकी प्रार्थना स्वीकार करके एक पुरातन संत 'बाबाजी चैतन्य' द्वारा स्वप्न में उनको 'मंत्र-दीक्षा' दिलवाई। इस संबंध में एक अभंग में कहा गया है—

"गुरूदेव ने सचमुच मेरे ऊपर बड़ी कृपा की, पर मुझसे तो उनकी कोई सेवा न बन पड़ी। स्वप्न में इंद्रायणी की तरफ स्नान के लिए जाते हुए मार्ग में वे मिले और मेरे मस्तक पर हाथ रख दिया। उन्होंने भोजन के लिए एक पाव घी माँगा, पर उसे लाना तो मैं भूल गया था। फिर कोई अनिवार्य आवश्यकता आ पड़ने से वे शीघ्र ही चले गये और मुझे गुरू परंपरा का नाम इस प्रकार बतला गये कि प्रथम गुरू 'राघव चैतन्य' उनके शिष्य 'केशव चैतन्य' और फिर अपना नाम 'बाबाजी चैतन्य' बतलाया। मुझे रामकृष्ण हरि' मंत्र दिया। माह सुदी दशमी, गुरुवार को गुरु का वार समझकर मुझे स्वीकार कर लिया।"

तुकाराम ने 'स्वप्न-दीक्षा' देने वाले अपने गुरु का जो परिचय दिया था वह काल्पनिक नहीं था। मराठी के 'चैतन्य कथा कल्पतरु' नामक ग्रंथ में लिखा है कि 'राघव चैतन्य' एक बड़े तपस्वी हुए थे। उन्होंने माँडवी में पुष्पवती नदी के तट पर वर्षों तक घोर तपस्या की थी। उनके शिष्य 'कृष्ण चैतन्य' हुए। एक बार किसी घटनावश इन्होंने हैदराबाद के निजाम को कुछ चमत्कार दिखाया, जिससे वह इनका भक्त हो गया और इनके सम्मानार्थ दो स्मारक बनवाये। इन्हीं 'केशव चैतन्य' के शिष्य 'बाबाजी चैतन्य' हुए, जिन्होंने तुकाराम को स्वप्न-दीक्षा दी।

सिद्ध को भी साधना करने की आवश्यकता—

कुछ लोग ऊपर लिखी घटना में यह शंका प्रकट करते हैं कि तुकाराम तो सिद्ध पुरुष थे और अपने अनुयायियों के मतानुसार संसार के कल्याणार्थ उनका आगमन बैकुंठ लोक से हुआ था, फिर उनको चित्त शुद्धि और अन्य साधनों की क्या आवश्यकता थी ? उनके अभंगों में एकाध जगह कहा गया है कि "संसार को धर्म-नीति का मार्ग दिखलाने, भगवत्-भक्ति का डंका बजाने और संतों का रास्ता साफ करने के लिए मैं भगवान् का संदेश लेकर आया हूँ।" तो

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

फिर सामान्यजनों की भाँति चित्त शुद्धि के उपाय ढूँढ़ना और उन साधनों को करके लोक-कल्याण का काम पूरा कर सकने का रहस्य क्या है ? संसार का उद्धार करने के लिए ही जिनका आविर्भाव हुआ है, उनका चित्त मलिन कैसे हो सकता है ?

इस शंका का समाधान यह है कि भगवान् के अंश स्वरूप अवतारों के भी जो चरित्र वर्णन किये गये हैं, वे सामान्य मनुष्यों के अनुरूप ही हैं। यदि वे अध्ययन, मनन, साधन, अभ्यास आदि के बिना ही महान् कार्यों को करके दिखला दें तो उनका उदाहरण सामान्य मनुष्यों के किस काम का ? संभव है उनको कुछ विशेष दैवी विभूतियाँ बाद में प्राप्त हो जाती हों, पर मनुष्य देह धारण करने पर उनको मनुष्योचित व्यवहार ही करना चाहिए। महात्माओं के चरित्र के दो अंग होते हैं—एक दैवी और दूसरा मानुषी। दैवी अंग द्वारा वे कुछ विशेष कार्यों की पूर्ति करते हैं, जिनका कर सकना अन्य लोगों के लिए कठिन होता है, परंतु अपना सामान्य जीवन-क्रम वे अन्य सब लोगों के समान ही रखते हैं, जिससे उनका चरित्र हमारे लिए दृष्टांत, स्वरूप और अनुकरणीय हो सके। 'भगवत् गीता' के अनुसार भगवान् ने आवश्यकता पड़ने पर अर्जुन को विराट् रूप का दर्शन कराया, पर साथ में यह भी कह दिया—

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।

(गी० ३.२३)

इस कथन द्वारा उन्होंने वर्णाश्रम धर्म के पालन और लोक-संग्रह के आदर्श का अनुसरण करने का निर्देश किया है। तुकाराम के चरित्र में भी ये दोनों अंग दिखाई पड़ते हैं। उन्होंने बिना किसी विशेष प्रभाव के महाराज शिवाजी और ब्राह्मणत्व के अभिमानी, सुप्रसिद्ध पंडित रामेश्वर को अपना अनुयायी बनाकर अपनी दैवी शक्ति का परिचय दे दिया। पर वैसे सदा बिलकुल सामान्य और गरीब गृहस्थ की तरह जीवन बिताया, शारीरिक परिश्रम करके उदर निर्वाह किया, आजन्म गृहस्थी की कठिनाइयों को सहन करते हुए स्त्री-बच्चों का भी पालन करते रहे। ये बातें उनकी बहुत बड़ी विशेषताएँ और महानता हैं। यदि वे संसार को त्यागकर साधु अथवा

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

चमत्कारी बाबा बन जाते तो उनका चरित्र जन साधारण के लिए निरुपयोगी होता। लोग उनके प्रति श्रद्धा-भक्ति रख सकते थे, पर उनका अनुकरण करके कोई लाभ नहीं उठा सकते थे। पर उन्होंने अध्यात्म मार्ग में उच्च कोटि की योग्यता प्राप्त करके भी अपना जीवन और रहन-सहन एक साधारण गृहस्थ के समान बनाये रखा, यही सबसे अधिक महत्त्व की बात है, जिससे सामान्य व्यक्ति भी शिक्षा ग्रहण कर सकता है।

मन को जीतना सबसे बड़ा पुरुषार्थ—

तुकाराम ने अपने मन को वश में करने के लिए बड़ा प्रयत्न किया था और उन्होंने अन्य अध्यात्म-प्रेमियों को यही उपदेश दिया है कि मनोजय के बिना आत्मजय की बात करना दंभ मात्र है। पर मन का जीतना सहज नहीं और यही कारण है कि सार्वभौम सम्राटों की अपेक्षा भी अपने मन पर विजय प्राप्त करने वाले एक लंगोटीधारी साधु को संसार में अधिक महत्त्व दिया जाता है। इस तथ्य को समझाते हुए तुकाराम ने कहा—

मन करा रे प्रसन्न, सर्व सिद्धि चे साधन।
मोक्ष अथवा बंधन, सुख समाधान इच्छातें।।

अर्थात्—"भाइयों ! मन को प्रसन्न करो, जो कि सब सिद्धियों का मूल और बंधन तथा मोक्ष का कारण है। उसको स्वायत्त करके ही सुख की इच्छा की जा सकती है।"

आगे चलकर वे कहते हैं "मन पर अंकुश रखना चाहिए कि जिससे जाग्रति का नित्य नवीन दिवस उदय होता रहे।" पर यह बात कहने में जितनी सहज है, उतनी ही करने में कठिन है, इस बात को भी तुकाराम बहुत अच्छी तरह समझते थे। इसलिए उन्होंने भगवान् से बार-बार यही प्रार्थना की है कि वे उन्हें मन को वश में करने की शक्ति दें। इस दृष्टि से वे निरंकुश मन की निंदा करते हुए कहते हैं—"मन को रोकने की इच्छा करें तो भी यह स्वेच्छाचारी नहीं रुकता। मेरा मन मुझे ही हानि पहुँचाता है। इसके भीतर सांसारिक प्रपंच भरा है, भक्ति तो बाहर ही दिखलाई पड़ती है। इसलिए हे भगवान् ! इस मन को मैं आपके चरणों में रखता हूँ। इस मन के

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

कारण हे भगवान् मैं बहुत ही दुःखी हूँ। क्या मन के इन विकारों को आप भी नहीं रोक सकते ? इसने मेरे मार्ग में काम, क्रोध के पर्वत खड़े कर दिये हैं, जिससे भगवान् दूसरी तरफ ही रह गये। मैं इन पहाड़ों को लाँघ नहीं सकता और कोई रास्ता भी दिखलाई नहीं पड़ता। अब नारायण मेरे सुहृद कहाँ रहे ? वे तो मुझे छोड़कर चल दिये। मन ऐसा चंचल है कि एक घड़ी या एक पल भी स्थिर नहीं रहता। इसको मैंने बहुत रोका, बाँधकर रखा, पर इससे यह और भी बिगड़ने लगता है और चाहे जहाँ भागता है। इसको न भजन प्रिय लगता है न शास्त्र-कथा रुचिकर जान पड़ती है। यह तो केवल विषयों की तरफ ही दौड़ता है।''

धन, कामवासना और मान—

अध्यात्म-मार्ग में धन, कामवासना और मान तीन बड़ी खाइयाँ हैं। प्रथम तो इस मार्ग पर चलने वाले यात्री ही थोड़े होते हैं। फिर जो होते भी हैं, वे पहली खाई अर्थात् अर्थ-लिप्सा में ही गायब हो जाते हैं। जो बचे रहते हैं, वे दूसरी खाई—कामवासना में डूब जाते हैं। इससे भी बचकर जो आगे बढ़ते हैं, वे तीसरी खाई—यश की लालसा में खप जाते हैं। जो इन तीनों खाइयों को पार कर जाते हैं, वे ही अध्यात्म के शिखर पर पहुँचने का सौभाग्य प्राप्त करते हैं।

तुकाराम का मनः संयम बड़ा प्रचंड था, इससे पहली दो खाइयों को तो वह सहज ही पार कर गये। पर तीसरी के पार करने में उन्हें भी कुछ कठिनाई हुई, ऐसा जान पड़ता है। सबसे पहले धन की खाई आती है, परंतु तुकाराम ने वैराग्य की प्रथम अवस्था में ही 'धन को पत्थर के समान ही नहीं, वरन् गोमांस के समान' मानने का निश्चय कर लिया था। शिवाजी महाराज ने उनके उपदेशों से तृप्त होकर हीरा, मोती सुवर्ण मुद्राएँ भेंट स्वरूप भेजी थी, पर तुकाराम ने उनको देखा भी नहीं, ज्यों का त्यों वापस कर दिया। वैराग्य होने के पश्चात् वे धन के संबंध में निर्लिप्त रहे।

दूसरा मोह कामवासना का होता है। यद्यपि तुकाराम अंत तक गृहस्थ बने रहे, पर उन्होंने किसी स्त्री को वासना के भाव से कभी नहीं देखा। उनकी दिनचर्या भी ऐसी थी कि रात्रि के समय

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

'विट्ठल-मंदिर' में कीर्तन समाप्त होते-होते बारह बज जाते थे और फिर वह कठिनता से तीन-चार घंटे सो सकते थे। वह भी कभी मंदिर में ही सोते रहते, कभी घर आ जाते। फिर उषाकाल में ही उठकर स्नान करके श्री विट्ठल की पूजा करते और सूर्योदय होते ही किसी पर्वत के ऊपर जा बैठते और वहाँ से प्रायः संध्या तक वापस आते। इस दिनचर्या में स्त्री से मिलने का अवसर कदाचित् ही मिलता था। जिस पुरुष में ऐसी प्रखर वैराग्य-भावना हो, वह अन्य स्त्रियों की कामना कैसे कर सकता है ? पर-पुरुष से प्रेम करने वाली स्त्रियाँ तो रीछनी के समान लगती थीं—

तुका म्हणे तैसा दिसतील नारी।
रिसाचिय परि आम्ह पुढे।।

अर्थात् "ऐसी चरित्रहीन स्त्रियाँ मेरे सम्मुख आयें तो मुझे वे रीछनी जैसी जान पड़ती हैं।" जिस प्रकार रीछनी खून चूसकर प्राण हर लेती हैं, उसी प्रकार इस तरह की स्त्रियों का संपर्क परमार्थी व्यक्ति के लिए हानिकारक होता है। इसीलिए उन्होंने कहा कि "अध्यात्मवादी मनुष्य को प्राण जाने पर भी स्त्रियों के साथ वासनायुक्त वार्तालाप नहीं करना चाहिए।" जिस साधक में इतनी दृढ़ता होगी, उसी का वैराग्य टिक सकता है। इसकी कमी के फलस्वरूप ही अनेक 'गुरु बाबाजी' और 'महात्मा' दया, परोपकार, नारी-उद्धार की बातें करते-करते कहीं से कहीं जा पहुँचते हैं। तुकाराम और समर्थ गुरु रामदास जैसे सच्चे संयमी सत्पुरुषों का ही काम है कि वे स्त्री-जाति की उन्नति के उपाय करें, अधकचरे व्यक्तियों के बस की यह बात नहीं है। जिन्होंने अपना ही उद्धार नहीं किया, वे दूसरों का उद्धार क्या करेंगे ? वे तो उन्नति और उद्धार के नाम पर अपनी और दूसरों की अधोगति ही करेंगे।

जिस समय तुकाराम भंडारा पर्वत पर ईश्वर-ध्यान में निमग्न रहते थे, उस समय एक रूपवती स्त्री अपने मन से या किसी अन्य के कहने से उनकी परीक्षा करने एकांत में पहुँची। उस समय तुकाराम ने एक अभंग में उस स्त्री को अपने मन के भाव इस प्रकार बतलाये—

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

"पर-स्त्री मेरे लिए रुक्मिणी माता के समान है, यह मेरा सदा से निश्चय है। इसलिए हे माता ! तुम जाओ और मेरे लिए कुछ प्रयत्न मत करो। हम तो विष्णु के दास हैं। तुम्हारा यह पतन मुझसे सहन नहीं होता। तुम फिर कभी ऐसी खराब बात मुख से मत निकालना।" इस प्रकार तुकाराम ने उसे रुक्मिणी-माता बनाकर विदा कर दिया।

मनुष्य मात्र मान की इच्छा करते हैं। अन्य व्यक्ति हमको अच्छा कहें और हमारी बातों को सम्मानपूर्वक सुनें, यह कौन नहीं चाहता ? केवल दो तरह के व्यक्ति ही ऐसे होते हैं, जिन्हें मान की परवाह नहीं होती। एक तो दुर्व्यसनों और दुराचार में हद दर्जे तक फँसे हुए और दूसरे वे जो आत्म शुद्धि की दृष्टि से निंदा और स्तुतिं को समान समझ लेते हैं। तुकाराम ने जन-समाज की सम्मति की परवाह न करके सत्यासत्य का निर्णय अपनी आत्मा द्वारा ही किया और उसी पर आगे बढ़ते चले गये, जन-समाज को त्यागने का अर्थ यह नहीं कि उन्होंने अन्य लोगों के प्रति दया, करुणा, परोपकार के भाव को छोड़ दिया हो, पर दुनियादार लोग जो विवेकशून्य बातें किया करते हैं और कोई मनुष्य परमार्थ के भाव से भी कार्य करे, उसमें भी दोष ढूँढ़ने की ही चेष्टा करते हैं, उनकी बातों पर ध्यान देना उन्होंने व्यर्थ समझ लिया। उन्होंने इस विषय में कहा—

"मैं केवल अपना ही विचार करूँ तो ठीक है, क्योंकि अन्य लोगों के उद्धार की चर्चा करने पर भी, वे तो उदासीन ही रहते हैं। अगर उनकी इच्छा के विरुद्ध उनसे हरिकीर्तन के लिए कहा जाये तो उनको बुरा लगता है। हरिकीर्तन को कोई सुने या न सुने, चाहे तो वह अपने घर जाकर सुख से सो जाय, पर मैं तो अपने लिए प्रभु से करुणा की प्रार्थना करूँगा ही। जिसकी जैसी भावना होगी, उसे वैसा ही फल प्राप्त होगा।"

शुभ कर्म में बाधा डालने वाले—

इस प्रकार जब तुकाराम आत्म शुद्धि और आंतरिक शांति के लिए हरिकीर्तन करने लगे और जनता को भगवद्-भक्ति का उपदेश देना आरंभ किया तो अनेक लोग उनके पास आकर तरह-तरह के

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

तर्क-कुतर्क करने लगे वे तरह-तरह के सिद्धांत उपस्थित करके उनसे वाद-विवाद करने लगते। तरह-तरह की शंकाएँ उठाते इस पर उन्होंने कहा—

"मैं किस आधार पर विचार करूँ ? मेरे चित्त को कौन धीरज बँधायेगा ? संतों के आदेशानुसार मैं भगवान् के गुण गाता हूँ—सेवा धर्म पर चलता हूँ। मैं शास्त्रवेत्ता नहीं हूँ, वेदवेत्ता नहीं हूँ, सामान्य क्षुद्र जीव हूँ। पर लोग आकर मुझे तंग करते हैं, मुझ में बुद्धिभेद उत्पन्न करना चाहते हैं और कहते हैं—'भगवान् तो निराकार है—निर्गुण है।' इसलिये हे भगवान् ! अब तुम्हीं बताओ कि मैं तुम्हारा भजन करूँ या न करूँ ?"

"मैं किसी के घर भीख माँगने नहीं जाता, फिर भी कंटक मुझे दुःख देने को जबर्दस्ती आ जाते हैं। मैं न तो किसी का कुछ खाता हूँ और न किसी का कुछ बिगाड़ता हूँ, फिर भी पाखंडी लोग मेरे पीछे पड़े हैं। जिस बात को मैं नहीं जानता उसे वे मुझसे छलपूर्वक पूछते हैं। मैं उनके चरणों में पड़ता हूँ तो भी वे नहीं छोड़ते। अपने अकेले जीव से मैं किस-किस के साथ विवाद करूँ ? तेरे गुण बखानूँ—यथाशक्ति सेवा करूँ या कुतर्कीजनों के साथ बहस करूँ ? एक मुख से मैं क्या-क्या करूँ ?"

तुकाराम सीधे, सरल स्वभाव के भक्त थे। उनके सेवा-भाव और हृदय से निकले हरिकीर्तन के प्रभाव से जनता के बहुसंख्यक व्यक्ति उनके पास सुनने को आते और उनका सम्मान करते। इससे पुराने ढंग के पंडितों को ईर्ष्या होती थी। वे अपने को शास्त्रों का ठेकेदार और बहुत उच्च समझते थे, पर इस अहं-वृत्ति के कारण साधारण जनता के व्यक्ति उनके पास बहुत कम जाते थे। तुकाराम उनको अपने में से ही एक जान पड़ते थे, उनकी बातें भी खूब समझ सकते थे, इसलिए उनके कीर्तन में झुंड के झुंड लोग आ जाते थे। इससे पंडितों के मन में जलन होती थी और वे तरह-तरह के प्रश्न करके तुकाराम से बहस करना चाहते थे, जिससे उन्हें नीचा देखना पड़े। पर तुकाराम ने तो भक्ति और सेवा का सरल मार्ग अपनाया था, उन्हें शास्त्रों के शुष्क वितंडावाद से क्या मतलब ? इसलिए

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

अकारण समय नष्ट करने के व्यवहार से वे दुःखी होते थे और उससे बचाने की भगवान् से प्रार्थना करते थे।

तुकाराम ने सैकड़ों अभंगों में अपने को हर प्रकार से नीच, कपटी, पापी, दोषी प्रकट किया है और भगवान् से शरण देने की प्रार्थना की है। अनेक लोग इन बातों को निरर्थक मानते हैं, पर संत इनके द्वारा अपनी अहंवृत्ति पर विजय पाने की चेष्टा करते हैं। अहंकार मनुष्य का बहुत बड़ा शत्रु है और अनेक बार सज्जन और भले व्यक्तियों के भी पतन का कारण बन जाता है। दूसरा कारण यह भी था कि वे स्वयं ही अपने को दीन-हीन और दूषित मानते थे, जिससे दूसरों के दोष ढूँढ़ने वाले आलोचकों और बड़े बनने वाले अहंकारियों की निगाह से बचे रहें।

सत्संग की महिमा—

तुकाराम ने पाखंडी, दंभी, दिखावटी धर्मध्वजियों और अपने बड़प्पन के लिये शास्त्रार्थ करते-फिरने वाले 'पंडितों' की जिस प्रकार अवहेलना की है, उसी प्रकार स्थान-स्थान पर सत्संग की महिमा भी गाई है। उन्होंने कहा—

वराग्याचें भाग्य संत-संग हाचि लाभ।
संत कृपेचे हे दीप, करी साधका निष्पाप।।

अर्थात्—"वैराग्य का सबसे बड़ा सौभाग्य सत्संग की प्राप्ति ही हैं। संत-कृपा का यह दीपक साधक को निष्पाप बना देता है।"

जिसका जैसा स्वभाव होता है उसे वैसे ही व्यक्तियों की संगत में आनंद आता है। व्यसनों में फँसे लोग अपने ही समान व्यसनी लोगों से संपर्क रखते हैं। धार्मिक तथा भक्तिभाव वाले भगवद्भक्तों को ढूँढ़ लेते हैं। तुकाराम स्वयं परम सेवाभावी और पवित्र स्वभाव के थे और ऐसे ही व्यक्तियों से मिलना उनको अच्छा लगता था। यद्यपि सच्चे संत तो करोड़ों में एक भी होना कठिन है, पर जो स्वयं परोपकारी और निष्पाप हैं, उसके पास आकर सामान्य श्रेणी के धर्म-कर्म वाले भी संत ही बन जाते हैं। इसी दृष्टिकोण से तुकाराम ने एक स्थान पर कहा था—

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

"अगर कोई हीन श्रेणी का व्यक्ति भी निरंतर हरि का नाम लेता है तो मैं मन-वचन-कर्म से उसका दास हूँ। वह चाहे पवित्र कुल वाला हो या चांडाल, पर अपने को हरि का दास कहता हो तो वह धन्य है।"

तुकाराम का यह कथन संभवतः बहुत से लोगों को पक्षपात अथवा अतिशयोक्तिपूर्ण लगेगा, पर उसका गूढ़ आशय यह है कि सब तरफ से मन हटाकर निरंतर भगवान् का नाम जपने में इतनी शक्ति है कि अगर आचारहीन व्यक्ति भी उसे लेगा तो वह सुधरकर सदाचारी बन जायेगा। 'गीता' में भी ऐसा ही मत व्यक्त किया गया है—

अपि चेत्सुदुराचारो भजतेमामनन्यभाक्।
साधुरेव स मंतव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः।।(६।३०)

अर्थात्—"कोई मनुष्य पहले दुराचारी हो, पर फिर हरि भजन से सुमार्ग पर आ जाये तो फिर उसे साधु समझना चाहिए। उसका निश्चय पवित्र हो तो उचित समय पर उसका उद्धार हो ही जायेगा।" जबकि आंशिक रूप से भगवान् के मार्ग पर चलने की इतनी महिमा है तो जो व्यक्ति हृदय से परमार्थ पथ पर चलने का उद्योग कर रहे हैं, उनकी तो प्रशंसा करनी ही चाहिए—

"संतों के चरणों की रज जहाँ पड़ती है, वहाँ वासना का बीज सहज ही जल जाता है। तब राम-नाम में रुचि होती है और सुख की वृद्धि होने लगती है। यह बड़ा सुलभ साधन है और पूर्व जन्मों के पुण्य से ही प्राप्त होता है।"

संतों का स्वभाव दीन-दुःखियों के कष्टों पर द्रवित होना और उनके निवारण के लिये स्वयं कष्ट सहन करना ही रहा है। जो लोग 'संत' का अर्थ किसी पर्वत की गुफा में बैठकर ध्यान लगाना अथवा बड़े-बड़े तिलक-छापे लगाकर 'हरे राम-हरे कृष्ण' की धुन लगाना ही मान लेते हैं, वे गलती पर हैं। गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी संतों का मुख्य लक्षण परोपकार और सेवा-धर्म का पालन ही बतलाया है—

पर उपकार वचन मन काया।
संत सहज सुभाउ खगराया।।
संत सहहिं दुःख पर हित लागी।
पर दुख हेतु असंत अभागी।।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

साधु चरित सुभ सरिस कपासू।
निरस विसद गुनमय फल जासू।।
जो सहि दुख परछिद्र दुरावा।
वंदनीय जेहि जग जस पावा।।

तुकाराम ने स्वयं अपने उदाहरण से यह सिद्ध कर दिया कि बिना सेवा-धर्म को अपनाये कोई संत कहलाने का अधिकारी नहीं हो सकता। वे केवल भगवत् सेवा, हरिकीर्तन, धर्मोपदेश के रूप में ही प्रचार कार्य नहीं करते थे, वरन् शरीर द्वारा भी जिसकी जो सेवा बन सकती थी, उससे कभी इनकार नहीं करते थे। जब वे किसी अन्य गाँव में लगने वाले बाजार में घर के लिए सौदा खरीदने जाते तो गाँव की अनेक स्त्रियाँ अपना सौदा भी लाने का काम उनके जिम्मे कर देती थीं, जिससे उनको प्रायः बहुत अधिक बोझा लादकर कई मील तक चलना पड़ता था। और भी कोई व्यक्ति अपने निजी काम में सहायता देने को उन्हें बुलाता तो वे उसका काम खुशी से करवा देते थे। किसी भी दीन-दुःखी को देखकर उसकी सहायता को तत्पर हो जाना उनका स्वभाव ही था। इस प्रकार जहाँ तक उनसे बन पड़ता सेवा-धर्म का पालन करके अपने 'संत' नाम को चरितार्थ करते थे।

कर्मकांडी पंडितों द्वारा विघ्न-बाधाएँ—

पूना से नौ मील दूर बाघोली में रामेश्वर भट्ट नाम का विद्वान् कर्मकांडी पंडित निवास करता था। तुकाराम की कीर्ति को समस्त प्रदेश में फैली हुई देखकर और प्रत्येक व्यक्ति के मुख से उसके रचे हुए अभंगों को सुनकर उसको बड़ा बुरा लगा। खासकर इसलिए कि तुकाराम शूद्र था और अब अनेक ब्राह्मण भी उसके पैर स्पर्श करने लगे थे। रामेश्वर के विचारानुसार यह शास्त्रों द्वारा निर्देशित वर्ण-धर्म का स्पष्ट उल्लंघन था। इन दिनों महाराष्ट्र में स्मृति धर्म के मानने वाले ब्राह्मणों का विशेष रूप से बोलवाला था और वे शूद्रों को हर तरह से दबाकर रखने के पक्षपाती थे। कहा जाता है कि पेशवाई शासन में पूना के सार्वजनिक मार्गों पर चलते समय अछूतों को अपने साथ एक बर्तन रखना पड़ता था, जिसमें यदि आवश्यकता पड़े तो थूका जा सके। जिस सड़क पर कुत्ता, गाय, भैंस, बकरी, घोड़े आदि मल-मूत्र

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

करते रहते थे, उस पर शूद्र केवल अपने वंश के कारण थूक भी नहीं सकते थे। ऐसी दशा में एक शूद्र वंशोत्पन्न व्यक्ति की प्रतिष्ठा और मान्यता देखकर यदि ब्राह्मणत्व का अभिमानी रामेश्वर भट्ट ईर्ष्या-भाव से भर जाये तो इसमें कोई आश्चर्य की बात न थी।

जब हम इस घटना की तह में घुसकर विचार करते हैं तो मालूम होता है कि रामेश्वर पंडित का यह विरोध आकस्मिक या वैयक्तिक न था। जिस 'वारकरी संप्रदाय' (भागवत-धर्म) के तुकाराम अनुयायी थे, उसके साथ वैदिक कर्मकांडी लोगों का विरोध बड़ा पुराना था और वे उसे अपनी जड़ खोदने वाला समझते थे। स्मृतियों के नियमानुसार धार्मिक कृत्यों के कराने का अधिकार केवल ब्राह्मणों को ही था और उसी से किसी व्यक्ति की सद्गति मानी जाती थी। पर भागवत-धर्म मनुष्य मात्र को समान रूप से भगवत्-भक्ति का अधिकार देता था। इतना ही नहीं भागवत-धर्म के बहुसंख्यक प्रसिद्ध भक्त और संत ब्राह्मणों से भिन्न अन्य जातियों के व्यक्ति थे, जिनमें से कितने ही शूद्र और अछूत भी थे। इस आधार पर कर्मकांडी पंडित भागवत-धर्म को वर्णाश्रम धर्म को नष्ट करने वाली एक विद्रोही विचारधारा मानते थे।

पर पंडितों की यह धारणा सत्य नहीं थी, वरन् उन्होंने केवल स्वार्थ भावना के कारण ही इसे गढ़ लिया था। भागवत-धर्म वास्तव में अति प्राचीन भारतीय-ज्ञान-मार्ग का ही एक लोकोद्धारक रूप है। वैदिक कर्मकांड और भागवत-धर्म के बीच जो बातें विवादग्रस्त जान पड़ती हैं, वे ये ही हैं कि भागवत धर्म के भक्तगण बिना जात-पाँत पूछे चरित्र के आधार पर ही चाहे जिसकी प्रतिष्ठा करते हैं, संस्कृत भाषा के शास्त्रीय ग्रंथों का रहस्य प्रचलित देश-भाषा में प्रकट करते हैं। यज्ञ-यागादि को गौण बतलाकर भगवत्-भक्ति (परमार्थ और सेवा) की महिमा को ही सर्वप्रधान मानते हैं। ये बातें अधिकांश धर्म-व्यवसायी पंडितों को अपने स्वार्थ पर आघात करने वाली जान पड़ती हैं और वे पहले से ही इस भक्ति-मार्ग वालों का विरोध करते आये हैं। ऐसे ही पंडित नामधारियों ने संत ज्ञानेश्वर और एकनाथ को तरह-तरह से कष्ट दिये थे, यद्यपि वे भी ब्राह्मण ही थे। गोस्वामी तुलसीदास का काशी के पंडितों द्वारा विरोध और उन पर तरह-तरह

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

से आक्रमण करने का कारण भी भक्ति-मार्ग से द्वेष रखना ही था। अब तुकाराम को वैसे ही कष्ट देने को रामेश्वर भट्ट मिल गये।

रामेश्वर ने देखा कि तुकाराम प्राचीन रूढ़ियों के विपरीत ऐसी बातों का प्रचार कर रहा है, जिससे ब्राह्मणों के महत्त्व को धक्का लगता है। जब लोग भागवत-धर्म के उपदेशानुसार संतों को ही श्रेष्ठ मानने लगेंगे तब ब्राह्मणों की मान्यता कहाँ रही ? इस कारण रामेश्वर ने तुकाराम के कार्य में बाधा डालने का निश्चय किया। पर उसने उसको प्रत्यक्ष रूप से न रोककर टेढ़े मार्ग से अपना उद्देश्य पूरा करना चाहा। उसने विचार किया कि यह व्यक्ति (तुकाराम) देहू में कीर्तन करके अपना प्रभाव जमा रहा है और वहीं पर उसका 'विट्ठल देव' का मंदिर है। अगर उसे देहू से हटा दिया जाये, तो सब काम अपने आप सिद्ध हो जाय। इसके लिये उसने जो चाल चली, उसका वर्णन एक प्राचीन पुस्तक 'भक्त-लीलामृत' में इस प्रकार किया गया है—

"मन में ऐसा विचार करके उसने देहू गाँव के अधिकारी को लिखा कि 'तुको' शूद्र जाति का है और शूद्र होकर वेद के रहस्यों को कहता रहता है। हरिकीर्तन करके इसने भोले लोगों के ऊपर जादू कर दिया है। ब्राह्मण भी उसे नमस्कार करने लगे हैं। यह बात हमारे लिए लज्जाजनक है। सब धर्मों को इसने उड़ा दिया है और केवल कीर्तन की महिमा ही बतलाता फिरता है। इसने लोगों में ऐसा भक्ति-पंथ चलाया है कि जिसमें भक्ति का ढोंग ही रहता है। वास्तव में वह पाखंडी है और उसके प्रचार-कार्य को बंद करा देना चाहिए।"

देहू गाँव के पटेल ने रामेश्वर भट्ट का पत्र तुकाराम को पढ़कर सुना दिया। इससे तुकाराम को बड़ी चिंता हो गई। इस संबंध में उसने एक अभंग कहा—

"अब मैं क्या करूँ और कहाँ जाऊँ ? किसके आधार पर गाँव में रहूँ ? पटेल नाराज है, कहता है कि यह उच्छृंखल हो गया है। हाकिम ने भी ऐसा ही निर्णय दिया है। इस भले आदमी (रामेश्वर भट्ट) ने जाकर फरियाद की और मुझ गरीब को ही मार दिया। तुकाराम कहते हैं कि ऐसे व्यक्ति का संपर्क अच्छा नहीं होता। चलो, अब विट्ठल को ही चलकर ढूँढ़े।"

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

तुकाराम अपने गाँव से चलकर सीधे बाघोली में रामेश्वर भट्ट के पास पहुँचे और उसे दंडवत्-प्रणाम करके बड़े प्रेम से हरिकीर्तन करने लगे। उनके मुख से धारा-प्रवाह 'अभंग' निकल रहे थे, जिनमें ऊँचे दर्जे का तत्त्व-ज्ञान भरा था। उनको सुनकर रामेश्वर ने कहा—"तुम बड़ा अनर्थ कर रहे हो। तुम्हारे 'अभंगों' में श्रुति का भाव प्रकट होता है। पर तुम शूद्र हो और ऐसी वाणी बोलने का तुमको अधिकार नहीं है। तुम्हारा यह कार्य शास्त्र विरुद्ध है, श्रोता-वक्ता दोनों को नर्क में ले जाने वाला है। ऐसी वाणी बोलना तुम छोड़ दो।"

तुकाराम ने कहा—"भगवान् पांडुरंग की प्रेरणा से ही मैं ऐसी वाणी बोलता हूँ, अब वह निरर्थक हो जायेगी। आप ब्राह्मण ईश्वर स्वरूप हैं। आपकी आज्ञा शिरोधार्य करके मैं कविता करना बंद कर दूँगा, पर अब तक जो अभंग बन चुके हैं उनका क्या हो ?"

रामेश्वर ने कहा—"उन अभंगों की पोथी को तुम पानी में फेंक दो।"

तुकाराम—आपने जैसी आज्ञा दी है वैसा ही करूँगा।

यह कहकर तुकाराम देहू वापस आये और समस्त पोथियों को पत्थर के साथ एक कपड़े में बाँधकर नदी में डाल दिया। अभंगों की पोथियों को इस प्रकार डूबा देने की बात चारों तरफ फैल गई। इससे भक्तजनों को बड़ा दुःख हुआ और कुटिल तथा परनिंदक बड़े खुश हुए। ऐसे दुष्ट प्रकृति के लोग तुकाराम के पास आकर मजाक करने लगे—"पहले तो भाई के साथ झगड़ा करके तुमने कर्ज के सब कागज नदी में फेंक दिये। अब रामेश्वर भट्ट के साथ विवाद करके अभंगों की पोथियाँ डुबा दीं। दोनों तरह से अपना ही फजीता कराया। और कोई होता तो ऐसी हालत में अपना मुँह किसी को न दिखाता और चुल्लू भर पानी में डूब मरता।"

ऐसी बात सुनकर तुकाराम के हृदय को बड़ी चोट लगी। वह विचार करने लगे—"लोग तो ठीक ही कहते हैं। अपनी घर-गृहस्थी को मैंने ही आग लगाई और उससे विरक्त हो गया। उस कार्य के लिये मेरी जो हँसी उड़ाई गई, उसकी तो मुझे परवाह नहीं। वह तो चार दिन की चाँदनी है। पर यह सब करने पर भी जो भगवान् नहीं मिले, मेरे ऊपर होने वाले आघातों का निवारण उन्होंने नहीं किया तो

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

फिर जीने से क्या लाभ ? ऐसी हालत में उचित यही है कि अन्न-जल त्यागकर भगवान् के चरणों में पड़ जाऊँ, फिर उनको जो करना होगा वही करेंगे।'' यह सोचकर तुकाराम श्री विट्ठल-मंदिर के सामने तुलसी के थांभला के पास एक शिला पर तेरह दिन तक अन्न-जल त्यागकर केवल भगवान् का नाम लेते हुए पड़े रहे।

रामेश्वर भट्ट का पश्चात्ताप—

इधर तुकाराम विट्ठल भगवान् के सामने धरना देकर प्राण देने का संकल्प करके पड़े थे, उधर बाघोली में उनको कष्ट देने वाले रामेश्वर भट्ट पर आकस्मिक संकट आ गया। वह अपने निवास स्थान से कुछ मील दूर 'रामनाथ' के दर्शनों को जा रहा था। रास्ते में "अनगढ़ सिद्ध'' नामक औलिया फकीर का स्थान था, जिसमें एक बावड़ी बनी हुई थी। रामेश्वर भट्ट ने जैसे ही इस बावड़ी में स्नान किया, उसके शरीर में भयंकर खुजली और जलन-सी होने लगी। किसी ने कहा—यह 'औलिया' का कोप है और किसी ने कहा, यह तुकाराम से द्वेष करने का परिणाम है। खुजली को मिटाने के लिये बहुत-सी औषधियाँ की गईं, पर किसी से कुछ लाभ न हुआ। जब कोई उपाय कारगर न हुआ तो वह ज्ञानेश्वर महाराज की शरण लेने के लिये 'आणंदी' चला गया।

देहू में तुकाराम अन्न-जल त्यागकर विट्ठल भगवान् के सामने पड़े थे। तेरह दिन में उनकी दशा बहुत खराब हो गई। तुकाराम को स्वप्न आया कि तुम्हारी पोथियाँ नदी के समीप सुरक्षित पड़ी हैं, जाकर ले आओ। उस समय तुकाराम मरणासन्न लगते थे, श्वास मंद चलने लगी थी, हिलना-डुलना बंद था। यह देखकर कुटिल व्यक्ति विचार कर रहे थे कि 'बस, अब इनका खेल खत्म हो चला।' पर भक्तों को उनके मुख पर एक अपूर्व तेज दिखाई पड़ रहा था और नाम-स्मरण की मंद ध्वनि आ रही थी। स्वप्न का हाल सुनकर भक्तगण प्रसन्न हो उठे और 'राम कृष्ण हरि' का जयघोष करते हुए पोथियों को नदी में से उठा लाये। हरिकीर्तन का प्रभाव देखकर जनता को पूरा विश्वास हो गया और तुकाराम भी चैतन्य होकर बैठ गये।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

इसी समय रामेश्वर भट्ट आणदी में ज्ञानेश्वर महाराज के मंदिर में बैठा अपने कष्ट-निवारण की प्रार्थना कर रहा था। उसको भी ध्यान में श्री ज्ञानेश्वर यह कहते प्रतीत हुए कि—'तुमने महा वैष्णव तुकाराम के साथ झूठ-मूठ शत्रुता की है, इससे तुम्हारा पुण्य नष्ट हो गया है और यह व्याधि उत्पन्न हो गई है। अब तुम तुकाराम की ही शरण में जाओ। इससे तुम इस शारीरिक रोग से ही नहीं वरन् भव-रोग से भी छुटकारा पा जाओगे।" ज्ञानेश्वर महाराज का आदेश सुनकर रामेश्वर को अपनी करनी पर बड़ा पश्चात्ताप हुआ और उसने एक विनयपूर्ण पत्र लिखकर तुकाराम से अपने दोष की क्षमा माँगी। उसके उत्तर में तुकाराम ने यह 'अभंग' लिखकर भेज दिया—

चित्त शुद्ध तरी शत्रु मित्र होती, व्याघ्र हेन खातो सर्प तया।
विष तें अमृत, आघात तै हित, अकर्तव्य नीत होय न्यासी।
दुःख तें दहेज सर्व सुख फल, होतील शीतल अग्नि ज्वाला।
आ वलेल जीवां जीवाचियं परी, सकला अंतरी एक भाव।
तुका मणे कृपा केली नारायण, जाणितेतें येरयें अनुभव।

अर्थात्—"अपना चित्त शुद्ध हो तो शत्रु भी मित्र हो जाते हैं। सिंह और सर्प भी अपने हिंसक स्वभाव को भूल जाते हैं, विष अमृत हो जाता है, आघात कल्याणकारी सिद्ध होने लगता है, दूसरों का दुर्व्यवहार अपने लिए नीति की शिक्षा वाला बन जाता है। दुःख, सुख के रूप में बदल जाता है और अग्नि की ज्वाला शीतल हो जाती है।' जिसका चित्त शुद्ध है, उसे सब जीव प्रेम करते हैं। तुकाराम कहते हैं कि मेरे अनुभव में यही आता है कि नारायण ने ही इस आपत्ति काल में मेरे ऊपर कृपा की।"

कहना न होगा कि तुकाराम की सहनशीलता और सज्जनता का रामेश्वर के ऊपर विलक्षण प्रभाव पड़ा और वह अपने पांडित्य का अभिमान त्यागकर उनका शिष्य बन गया। उस अजातशत्रु महात्मा ने भी उसे हृदय से क्षमा करके स्वीकार कर लिया। तुकाराम और उनके भागवत-धर्म का विरोध करने को कमर कसने वाला रामेश्वर भट्ट उनका पक्का अनुयायी और सहकारी बनकर जीवन-पर्यंत इन्हीं के उपदेशों और सिद्धांतों का प्रचार करता रहा।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

मंवाजी बुवा की दुष्टता—

तुकाराम का दूसरा कट्टर शत्रु गोस्वामी मंवाजी बुवा था। इसका घर देहू गाँव में तुकाराम के विट्ठल मंदिर के बगल में ही था। वह तुकाराम का कीर्तन सुनने भी आ जाता था, पर उसके भीतर द्वेष-भावना भरी हुई थी। तुकाराम उसके मनोभाव को जानते थे, पर उन्होंने उससे प्रेम-भाव रखना कभी नहीं छोड़ा। अगर किसी दिन मंवाजी नहीं आता तो आदमी भेजकर उसे बुला लेते थे।

तुकाराम के बच्चों को दूध पीने के लिए उसके ससुर आपाजी ने एक भैंस भेज दी थी। एक दिन वह घूमती-फिरती मंवाजी के छोटे-से बगीचे में घुस गई और कुछ पौधों को खराब कर दिया। इससे क्रोधांध होकर वह तुकाराम पर गालियों की वर्षा करने लगा। जब तुकाराम ने कुछ भी उत्तर न दिया तो वह एक कंटीली डाल लेकर उनको मारने लगा। मुँह से गालियों का प्रवाह निकल रहा था और हाथों से मारता जाता था। पर बहुत कुछ मारने पर भी तुकाराम शांत बना रहा। यह उसकी परीक्षा का समय था और वह उसमें पूरी तरह उत्तीर्ण हुए। उस दिन जब मंवाजी कीर्तन में नहीं आया, तो वह स्वयं उसे बुलाने गया और उसके पैर दबाकर सब दोष अपना ही स्वीकार कर लिया। उन्होंने कहा—"अगर भैंस ने आपके पौधों को खराब न किया होता, तो आप इतना क्रोध क्यों करते ? मुझे इसका बड़ा दुःख है कि मेरे कारण आपके मुँह और हाथ को इतना कष्ट उठाना पड़ा।"

तुकाराम की इस अनुपम साधुता को देखकर मंवाजी मन में बड़ा लज्जित हुआ और उसके साथ कीर्तन में चला आया। पर उसके मन का नीचतापूर्ण भाव कभी पूर्णतः दूर नहीं हुआ। तुकाराम के पास आने वाले भक्तों और यात्रियों को यही समझाया करता था कि "तुकाराम तो शूद्र है, उसका कीर्तन सुनने क्यों जाते हो ? तुमको अगर उपदेश लेना है, तो मेरे पास से लेलो। उसका समस्त जीवन इसी प्रकार द्वेष करते हुए व्यतीत हुआ, जबकि तुकाराम उसके देखते-देखते देशपूज्य बन गया।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

शिवाजी महाराज को उपदेश—

तुकाराम कोरे भजनानंदी नहीं थे, वरन् नैतिक, सामाजिक कर्तव्यों का भी उनको पूरा ज्ञान था। वे सच्चे त्यागी और आत्मज्ञानी थे, इसलिए सभी विषयों में मूल तथ्य को समझ लेना उनका स्वभाव हो गया था। जब वे लोह गाँव में रहते थे तो महाराज शिवाजी ने उनके पास बहुत-सी बहुमूल्य भेंट घोड़ा आदि भेजे और उनसे पूना आने की प्रार्थना की। तुकाराम ने समस्त पदार्थों को लौटा दिया और नौ अभंग लिखकर भेज दिये।

"मशाल, छत्र और घोड़ों को लेकर मैं क्या करूँगा ? ये पदार्थ मेरे उपयुक्त नहीं है। हे पंढरी नाथ ! अब मुझे इसमें क्यों फँसाते हो ? मान और दंभ का कोई काम मेरे लिए सर्वथा त्याज्य है। मेरा चित्त जिसकी इच्छा नहीं करता, वे ही पदार्थ तुम मुझे देते रहते हो। मैं तो संसार के माया-मोह से अलग रहना चाहता हूँ। मैं ऐसी इच्छा अवश्य करता हूँ, परंतु करने-कराने वाले तुम्हीं हो।"

भगवान् में इस प्रकार अपनी निष्ठा को प्रकट करके तुकाराम ने महाराज शिवाजी को उद्देश्य करके लिखा—"चींटी और राजा मेरे लिए एक समान जीव हैं। सोना और मिट्टी मेरे लिए बराबर हैं। मुझे तो संपूर्ण बैकुंठ घर बैठे मिल गया है, अब मेरे यहाँ कमी किस बात की है ?"

"आप मुझे दे ही क्या सकते हैं ? मैं तो विट्ठल को चाहता हूँ। जो धन तुकाराम ने गोमांस के समान त्याज्य मान लिया है, उसे क्यों देते हो ? अगर आप कुछ देना चाहते हैं तो एक ही दान से मैं सुखी हो सकता हूँ। वह यह कि मुख से सदैव 'विट्ठल' का उच्चारण करते रहो। आपका धन, सोना-चाँदी मेरे लिए मिट्टी के समान है।"

तुकाराम के इस अलौकिक वैराग्य और त्याग को देखकर शिवाजी स्वयं उनके दर्शन करने लोहगाँव आये। उनके कीर्तन और उपदेशों से वे इतने प्रभावित हुए कि प्रतिदिन शाम को भोजन करने के उपरांत घोड़े पर सवार होकर 'लोहगाँव' या 'देहूँ' जहाँ कहीं भी तुकाराम हो, आने लगे। तुकाराम के उपदेशों से उनके मन में भी वैराग्य व्याप्त हो गया और उन्होंने तुकाराम के सामने राज-पाट और सांसारिक संबंध

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

त्यागने की भावना भी प्रकट की। इससे शिवाजी की माता जीजाबाई को बड़ी शंका हो गई और उसने तुकाराम के पास जाकर शिवाजी को राज-धर्म की शिक्षा देने की प्रार्थना की। तुकाराम ने कीर्तन करते-करते वर्णाश्रम धर्म पर प्रवचन करते हुए क्षात्र-धर्म और राज-धर्म का वर्णन किया और शिवाजी को स्वकर्तव्य पालन की प्रेरणा दी।

इसके पश्चात् एक अन्य अवसर पर जब शिवाजी महाराज अपने अनेक सरदारों और सेनानायकों के साथ कीर्तन सुन रहे थे, तो तुकाराम ने विचार किया कि इन लोगों को ऐसा उपदेश करना चाहिए, जिससे हरि-भक्ति के साथ स्वराज्य-संस्था की भी प्रेरणा मिले। उन्होंने उसी समय 'सिपाहीपन' पर कुछ अभंग बनाकर सुनाये, जिनमें कहा गया—

"सिपाहीपन के साथ उच्च सिद्धांतों का पालन करते हुए वीर बनो, वीरों की गाथाओं को चित्त में धारण करो। सिपाही बने बिना प्रजा के कष्टों का अंत नहीं हो सकता। प्राणदान देने वाले उदार सिपाही बनो। सिपाही के कुशल क्षेम का भार तो स्वामी पर रहता है। सिपाहीपन के सुख से जो सर्वथा वंचित रहता है, उसका जीवन धिक्कारने योग्य है।"

"धड़ाधड़ गोली छूट रही हों, बाण के ऊपर बाण आकर गिर रहे हों, इन सबको सिपाही सह लेता है। फिर वह भी ऐसी मूसलाधार वर्षा करता है, जिसका कोई हिसाब नहीं है। उसे केवल स्वामी और उसका कार्य ही दिखलाई पड़ता है। जो शूरवीर सिपाही है, वह ऐसे युद्ध के बाहर और भीतर खूब सुख लूटता है।"

"सिपाहियों को आत्म-रक्षा भी करनी चाहिए। विदेशी शत्रुओं को लूट ले, उनका सर्वस्व छीन ले, अपने ऊपर उनका वश न चलने दे, शत्रुओं को अपनी खबर भी न लगने दे। जो सिपाही ऐसा होता है, दुनिया उसको अपना नाथ मानती है। तुकाराम कहते हैं कि जिसके सिपाही ऐसे हों, वह तीनों लोकों में सबसे प्रबल सेनानायक है।"

"जो सिपाही शरीर को तिनके के समान और सोने को पत्थर के समान समझता है, वह अपने स्वामी से अभिन्न है। विश्वास के बिना सिपाही का कोई मूल्य नहीं है।"

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

"सच्चा सिपाही ही सिपाही को पहचानता है। उसमें एक ही स्वामी के लिए आदर और निष्ठा होती है। जो केवल पेट के लिए हथियार बाँधते हैं, वे तो मैले कपड़े ढोने वाले गधे हैं। जो सच्चा सिपाही है, वह मारना और बचाना भी जानता है। वह क्या विदेशियों को अपना अस्तित्व सौंप देगा क्या ? उसके आधीन हो जायेगा ? कभी नहीं। तुकाराम कहते हैं कि जो ऐसे सच्चे वीर हैं, उनको हम देवता मानकर वंदना करेंगे।"

इस प्रकार तुकाराम ने अपने अभंगों में सच्ची राष्ट्रीयता, निर्भयता और तेजस्विता का भाव प्रकट किया। भगवान् को पुकारने में, संतों के गुण गाने में, नाम की महिमा प्रकट करने में, दंभियों की पोल खोलने में उनकी वाणी का जो तेज प्रकट हुआ था, वैसा ही तेज उन्होंने राज्य की स्थापना और उसकी सुव्यवस्था के विषय में भी प्रकट किया। तुकाराम के अभंगों और उपदेशों का प्रचार विशेष रूप से पूना के आस-पास 'मावला' कृषक समुदाय में था। इन्हीं लोगों में शिवाजी को अजेय मावला सेना प्राप्त हुई थी, जिसने मुगल-साम्राज्य के छक्के छुड़ाकर हिंदू-राज्य की स्थापना में अद्‌भुत शौर्य प्रदर्शित किया था।

सेवा धर्म का स्वभाव—

तुकाराम आरंभ से ही परोपकारी और सेवा-भावी प्रकृति के थे। विशेष अवसरों पर ही नहीं, नित्य-प्रति की साधारण बातों में भी उनकी यह मनोवृत्ति प्रकट होती रहती थी। रास्ते में चलते हुए किसी यात्री के सर पर अधिक बोझा देखा, तो थोड़ी देर के लिए उसे अपने ऊपर रख लिया, जिससे उसे कुछ विश्राम मिल जाय। कोई बरसात में भीग जाये तो उसे ओढ़ने-पहनने को अपने वस्त्र दे देते थे और ठहरने को सूखा स्थान देते। किसी यात्री का पैर चलते-चलते सूज जाये तो वे गरम पानी करके उसे सेक देते थे। जो गाय या बैल कमजोर हो जाने से काम लायक न रहता और उसका मालिक उसे निकाल देता तो वे उसे चारा-पानी देते रहते। वे मन में भी कभी किसी के प्रति हिंसा की भावना नहीं लाते थे और चलते-फिरते पैर के नीचे दबकर कोई कीड़ा-मकोड़ा न मर जाय इसका बहुत ध्यान रखते थे।

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org

जिस तरह भी संभव हो दूसरों को आराम पहुँचाना, आवश्यकता पड़ने पर सबकी सहायता के लिए तैयार रहना, उनका जीवन-व्रत बन गया था। यों तो साधु पुरुषों का लक्षण परोपकार और दूसरों का कष्ट-निवारण बतलाया ही गया है, पर तुकाराम में यह विशेषता थी कि वे केवल मन और वचन से ही नहीं क्रिया रूप में शरीर से भी सबकी अधिक से अधिक सेवा करने को तैयार रहते थे। इससे हमारी दृष्टि में उनका महत्त्व बहुत अधिक बढ़ जाता है।

उनकी दूसरी बहुत बड़ी विशेषता यह जान पड़ती है कि सब प्रकार से त्यागी, विरक्त और भक्त हो जाने पर भी उन्होंने गृहस्थाश्रम त्याग नहीं किया और स्त्री का स्वभाव झगड़ालू होने पर भी परिवार वालों का अंतिम समय तक पालन करते रहे। यह एक ऐसा आदर्श है, जिसकी हमारे समाज को बहुत आवश्यकता है। आजकल अधिकांश लोगों की विचारणा यह देखने में आती है कि जिसे अध्यात्म या भक्ति के मार्ग पर चलना हो उसे गृहस्थ का त्यागकर साधू-संन्यासी बन जाना चाहिए। यह विचारधारा व्यक्ति और समाज के लिए बड़ी हानिकारक है। समाज की प्रगति और सुस्थिरता के लिए गृहस्थ-आश्रम के पालन की अनिवार्य रूप से आवश्यकता है। इसी प्रकार व्यक्ति के आत्म-विकास के लिए अध्यात्म अथवा भक्ति के सिद्धांतों को व्यवहार में लाना भी अत्यावश्यक है। इसलिए जो लोग इन दोनों को परस्पर में विपरीत बतलाते हैं, वे समाज की एक प्रकार से कुसेवा ही करते हैं। समाज का आदर्श विकास तभी होना संभव है, जब उसके सदस्य परोपकार और त्याग के महत्त्व को समझकर तदनुसार आचरण करते हुए गृहस्थी का पालन और संचालन करें।

तुकाराम महान् संत हुए भी ऐसे ही सद्गृहस्थ के उदाहरण थे। उन्होंने सच्चाई, ईमानदारी, परोपकार, सेवा-धर्म, ईश्वर-भक्ति सबका पालन करते हुए अपने गृहस्थी के कर्तव्यों का भी उचित रीति से पालन किया। संवत् १७०७ में स्वर्गारोहण होते समय उनके दो पुत्र और तीन कन्याएँ थीं। सच पूछा जाये, तो सांसारिक और आध्यात्मिक कर्तव्यों का इस उत्तमता के साथ समन्वय करने से ही वे महान् संत बने।

मुद्रक युग निर्माण योजना प्रेस, मथुरा (उ. प्र.)

Free Read/Download & Order 3000+ books authored by Yugrishi Pt. Shriram Sharma Acharya(Founder of All World Gayatri Pariwar) on all aspects of life in Hindi, Gujarati, English, Marathi & other languages at
www.vicharkrantibooks.org http://literature.awgp.org